पश्चिमी हिमालय की पहाड़ियों में लिलियम की खेती

हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पालमपुर, हि.प्र.

आज के आधुनिक पुष्प व्यापार के बाजारों में लिलियम के फूलों की 'कट फ्लावर' व 'पॉट प्लान्ट' के रूप में काफी मांग है। विभिन्न प्रकार की लिलियों में से सबसे अधिक मांग ओरियेन्टल हाइब्रिड तथा एसियेटिक लिलियों की है तथा ईस्टर व टाईगर लिलि भी काफी प्रचलित है। ये सभी लिलियां 'कट फ्लावर' के रूप में काफी अच्छी हैं। भारत में लिलियां धीरे-धीरे काफी लोकप्रिय होती जा रही हैं। इनकी कुछ प्रजातियां पर्ण परिदाह (पत्तों में जलन जैसे धब्बे) से युक्त होती हैं जिसके कारण इन्हें बाजारों में स्वीकार नहीं किया जाता है। इसीलिए व्यापार की दृष्टि से उन्हीं प्रजातियों का चयन करना चाहिए जिनमें परिदाह न होता हो।

स्थान

लिलियम की खेती के लिए ऐसे स्थानों का चयन किया जाना चाहिए जहां पर पाला न गिरता हो तथा तेज हवायें भी न चलती हों। मुख्यतः लिलियम को आंशिक छाया में उगाया जाना चाहिए। प्रकाश वेग को कम करने के लिए छायादार जालियों को प्रयोग करना भी आवश्यक होता है।

मिट्टी

लिलियम के लिए मिट्टी अच्छी बनावट वाली तथा जिसमें पानी न ठहरता हो होनी चाहिए। मिट्टी हल्की भुरभुरी तथा जैविक पदार्थों से युक्त होनी चाहिए। लवणों की अधिक मात्रा के प्रति लिलियम काफी संवेदनशील होती है तथा पौधों की बढ़वार पर इसका बुरा असर पड़ता है। मिट्टी की पी.एच. 5.5 से 7.0 के बीच उपयुक्त होती है। रोगों के प्रकोप को कम करने के लिए मिट्टी को 2 प्रतिशत फार्मेलीन का प्रयोग करके रोगाणु मुक्त कर लेना चाहिए।

तापमान

अच्छे पुष्प उत्पादन व पौधों की बढ़वार के लिए रात का तापमान 10–15° से. तथा दिन का 20–25° से.

के बीच अवश्य होना चाहिए। अधिक तापमान के कारण पौधे छोटे रह जाते हैं तथा तनों में कलियों की संख्या भी कम हो जाती है।

प्रकाश

पौधों को सीधे सूर्य के प्रकाश में नहीं उगाना चाहिए। गर्मियों के माह में तेज प्रकाश के कारण पौधे छोटे रह जाते हैं। पौधों के ऊपर 50–75 प्रतिशत छायादार जाली का प्रयोग करना लाभदायक होता है।

शल्क कन्दों का आकार

यह एक सर्वमान्य बात है कि बड़े आकार के शल्क कन्दों के पौधों में तने लम्बे व अधिक कलियों वाले उत्पन्न होते हैं। फूलों के उत्पादन के लिए 10/12 से. मी. से कम परिधि वाले शल्क कन्दों का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। अन्य जातियों के अलावा ओरियेन्टल हाइब्रिड लिलियों में बड़े बल्व (22/24 से. मी. परिधि के) ही लगाने चाहिए।

लगाने का समय

पश्चिमी हिमालय क्षेत्रों में मानसून के अलावा वर्ष भर लिलियम को लगाया जा सकता है। मानसून के दौरान अत्यधिक वर्षा के कारण शल्क कन्द सड़ जाते हैं। मैदानी क्षेत्रों में इन्हें अक्टूबर–नवम्बर माह में लगाया जा सकता है। उन्हीं शल्क कन्दों को लगाना चाहिए जो प्रस्फुटित हो गये हों।

रोपण घनत्व

शल्क कन्दों की सघनता इनके प्रकार, प्रजाति तथा आकार पर निर्भर करती है। रोपण दूरी लगाने के समय पर भी निर्भर करती है। सर्दी की अपेक्षा गर्मी के मौसम में इन्हें अधिक घना लगाया जा सकता है। आमतौर पर इन्हें 15 से. मी. की दूरी पर पंक्तियों में तथा दो पंक्तियों में 30 से. मी. की दूरी पर लगाया जाता है। करीबन 28 शल्क कन्दों को प्रति वर्ग मीटर क्षेत्र में लगाया जा सकता है।

गहराई

यह अत्यन्त आवश्यक है कि शल्क कन्दों में लगाने से पूर्व स्वस्थ व विकसित जड़ों का विकास हो, क्योंकि पहले तीन सप्ताहों में जल व पोषक तत्वों का संचार इन्हीं जड़ों पर निर्भर होता है। जब शल्क कन्द प्रस्फुटित हो जाते हैं तो जमीन के अन्दर बल्व के ऊपरी भाग पर तने से जड़ें निकलनी शुरू हो जाती हैं। ये जड़ें बल्व की जड़ों के स्थान पर पौधे को तुरन्त पानी तथा खाद्य पदार्थों का संचार शुरू कर देती हैं। उत्तम किस्म के फूलों को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि इन जड़ों का विकास अच्छी प्रकार से होने दिया जाए। सर्दियों में शल्क कन्दों को 10–12 से. मी. तथा गर्मियों में 12–15 से. मी. की गहराई पर लगाना चाहिए।

पोषण

अच्छी प्रकार सड़ी हुई गोबर की खाद को मिट्टी में 1 घन मीटर प्रति 100 वर्ग मीटर क्षेत्र के हिसाब से भली भांति मिलाना चाहिए। लिलियम को बहुत कम पोषक तत्त्वों की आवश्यकता होती है, विशेष कर पहले तीन सप्ताहों के दौरान। जिस मिट्टी में पोषक तत्त्व कम हों उसमें पोटास व फॉस्फोरस को मिलाना चाहिए। कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट @ 1 कि.ग्रा. प्रति 100 वर्ग मीटर के हिसाब से रोपण के तीन सप्ताह बाद डालना चाहिए। इसी प्रकार जब पौधों में अच्छी बढ़वार होने लगे, दुबारा फिर इसी मात्रा में देना चाहिए।

सिंचाई

लिलियों की खेती में पौधों की बढ़वार के लिए सिंचाई का विशेष महत्व है मिट्टी को रोपण से पहले सींच देना चाहिए तथा बाद में थोड़ा–थोड़ा समय बाद हल्का पानी लगाना चाहिए ताकि जड़ व बल्व जमे रहें। मिट्टी की ऊपरी सतह पर तनों में जड़ों का विकास होता है इसलिए यह आवश्यक है कि ऊपरी 30 से. मी. सतह में लगातार नमी बनी रहे। खेत में पानी का जमाव नहीं होना चाहिए। शुष्क मौसम के दौरान पानी की खपत प्रति वर्ग मीटर क्षेत्र में 10 लीटर तक हो जाती है।

स्टेकिंग

पौधों को सीधा रखने के लिए उन्हें सहारे की आवश्यकता होती है। पौधों को सहारा देने के लिए नायलोन की जाली का प्रयोग सबसे अच्छा होता

है। जैसे–जैसे पौधे बड़े होते जाते हैं जालियों की उंचाई को भी बढ़ाते जाना चाहिए।

फसल की कटाई

फूल रोपाई के 90 से 120 दिनों के बाद काटने के लिए तैयार हो जाते हैं। जैसे ही पहली कली में रंग का विकास होने लगे, लिलियों के फूलों को काट देना चाहिए। अगर फूलों को सही अवस्था से पूर्व काट दिया जाये तो कली का विकास भली–भांति नहीं हो पाता है। अगर बहुत देर से, यानी कि कली के पूर्ण खिल जाने पर, फूलों को काटा जाये तो, फूल सफर के दौरान खराब हो जाते हैं। काटने के बाद फूलों के तनों को तुरन्त ठन्डे पानी में रखना चाहिए। अगर आवश्यकता हो तो फूलों को एक सप्ताह के लिए 2–5° से. पर भण्डार किया जा सकता है। सुक्रोज 5 प्रतिशत + एच. क्यू. एस. 200 पी पी एम का घोल फूलों के जीवन को बढ़ा देता है।

श्रेणीकरण

फूलों को काटने के बाद उन्हें तनों की लम्बाई व प्रति तने में कलियों की संख्या के आधार पर श्रेणीकरण कर दिया जाता है। तने के निचले 10–15 से. मी. भाग से पत्तियों को हटा देना चाहिए इससे फूलों की गुणवत्ता बढ़ जाती है।

बल्व व स्केल रॉट

यह बीमारी फयूज़ेरियम व

क्लिन्डोकारपोन फफूंदियों के कारण उत्पन्न होती है। इस बीमारी से ग्रसित पौधे छोटे रह जाते हैं तथा पत्तियां पीले हरे रंग की हो जाती हैं। तने के भूमिगत भाग पर नारंगी, भूरे व गहरे भूरे धब्बे दिखाई देते हैं जो कि बाद में बड़े होकर तने के अन्दर फैल जाते हैं। ग्रसित बल्वों के स्केल पर गहरे भूरे धब्बे दिखने लगते हैं तथा बल्व के निचले भाग व स्केल पर सड़न शुरू हो जाती है और पौधा समय से पूर्व मर जाता है।

बीमारियों को दूर रखने के लिए रोगाणु रहित मृदा में शल्क कन्दों को लगाना चाहिए। शल्क कन्दों को रोग मुक्त करने के लिए उन्हें 0.2 प्रतिशत कैपटान + 0.2 प्रतिशत वेनलेट के घोल में एक घन्टे तक डुबो कर रखना चाहिए। खेत के तापमान को जहां तक सम्भव हो फसलकाल के दौरान समय–समय पर पानी देकर ठन्डा रखना चाहिए।

फुट रॉट

यह रोग फाइटोप्थोरा नामक फफूंदी के कारण होता है। रोग ग्रसित पौधों में बैंगनी भूरे रंग के धब्बे ऊपर की ओर फैलते हैं। पौधे या तो छोटे रह जाते हैं या फिर अचानक मुर्झा जाते हैं तथा तने के निचले भाग से पत्तियां पीली पड़ जाती हैं। इस बीमारी की रोकथाम के लिए मृदा को रोगाणु रहित करने के पश्चात कन्दों को लगाना चाहिए। डाईथेन एम–45 @ 200 ग्राम प्रति 100 वर्ग मीटर के हिसाब से मिट्टी को ड्रेन्च करने के लिए प्रयोग करना चाहिए।

रूट रॉट

यह रोग पीथियम नामक फफूंदी के कारण होता है। यह फफूंदी नमी तथा 25–30° से. तापमान पर अधिक फैलती है। रोगयुक्त बल्व व तने की जड़ों में हल्के भूरे धब्बे तथा गलन के लक्षण दिखाई देते हैं। ग्रसित पौधे छोटे रह जाते हैं, पत्तियां पतली तथा हल्के रंग की हो जाती हैं। इस प्रकार के पौधों में कलियां सामान्य पौधों की अपेक्षा अधिक गिरती हैं, फूल छोटे रह जाते हैं तथा भली भान्ति नहीं खिल पाते।

मृदा को रसायनों से रोगमुक्त करना चाहिए। रोग ग्रसित पौधों में डाईथेन एम–45 @ 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए। मृदा को डाईथेन एम–45 @ 0.2 प्रतिशत घोल से ड्रेन्च करना लाभदायक होता है।

लीफ स्पॉट रोग

पत्तियों पर धब्बे बोट्राइटिस फफूंदी से नमी युक्त वातावरण में होते

हैं। यह फफूंदी बीजाणु उत्पन्न करती है तथा वर्षा व हवा के कारण पौधों में फैल जाती है। शुष्क वातावरण में यह रोग नहीं फैलता, जब पौधा रोग से ग्रसित होता है तो पत्तियों पर 1–2 मि. मी. व्यास के गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखने लगते हैं जो कि गोल व अण्डाकार आकार में बढ़ जाते हैं। रोग से प्रभावित पत्तियां तथा फूल अन्त में मर जाते हैं। इस बीमारी की रोकथाम के लिए सिंचाई रोक कर मिट्टी को शुष्क करना चाहिए, बेनलेट का छिड़काव @ 5 ग्रा. प्रति 10 वर्ग मीटर क्षेत्र में कर देना चाहिए।

विषाणु रोग

लिलि विभिन्न प्रकार के विषाणु रोगों से प्रभावित होती है। जिनमें लिलि सिमटमलेस वायरस, कुकूम्बर मोजैक वायरस, ट्यूलिप कलर ब्रेकिंग वायरस इत्यादि मुख्य हैं। विषाणु रोगों से ग्रसित शल्क कन्दों से उगाये गये पौधे कमजोर हो जाते हैं तथा फूल भी अच्छी किस्म के नहीं होते। विषाणु रोग की अधिकता वाले पौधे छोटे तथा आकृतिक विकृति वाले हो जाते हैं। अच्छे फूलों को उगाने के लिए विषाणु रोगों से मुक्त शल्क कन्दों को ही लगाना चाहिए ।

कीट–पतंग

एफिड

एफिड मुख्य रूप से नई पत्तियों के पृष्ट भाग पर रहते हैं तथा नई कलियों को भी प्रभावित करते हैं। जिसके कारण फूलों में विकृति आ जाती है। इनकी रोकथाम के लिए एल्डीकार्ब (टेमिक) धूल को 3 ग्रा. प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से जब पौधों में पहला तना निकले, प्रयोग करना चाहिए। रोगोर, मैलाथियान या इन्डोसल्फान का छिड़काव @ 2 मि. ली. प्रति लीटर पानी के साथ करना चाहिए।

थ्रिप्स

यह भी एक प्रकार का रस चूसने वाला कीट होता है इसके अत्यधिक प्रभाव के कारण पौधों की बढ़वार तथा फूलों पर बुरा असर पड़ता है तथा वे बाजारों में भी खरीदे नहीं जाते।

समय–समय पर इण्डो–सल्फान, मोनोक्रोटोफॉस, मैलाथियान इत्यादि का छिड़काव @ 2 मि. ली. प्रति लीटर पानी के साथ करने से पौधे इनके प्रभाव से मुक्त रहते हैं।

लिलि की बहुत सी प्रजातियां निचले तथा मध्य हिमालय क्षेत्रों में भली–भान्ति उगती हैं।

एसिएटिक हाइब्रिड लिलियां

एडेलिना, अमेरिका, बूनेलो, चैन्टी, शिकागो, ग्रां पैराडिसो, लन्दन, मारसेल, मिन्सट्रील, मोना, नोवे सेन्टो, पौलियाना इत्यादि।

ओरिएन्टल हाइब्रिड लिलियां

अल्हम्बा, अमान्डा, अटलान्टिस, कैसकैडे, किसप्रूफ, मेडिटेरैनी, मारको पोलो, स्टार फाइटर, स्टार गेजर, ह्वाइट मेरोस्टार इत्यादि।

लौन्जिफ्लोरम हाइब्रिड

अमिटा, स्नो क्वीन, ह्वाइट फॉक्स, ह्वाइट सैटिन इत्यादि।

टाईगर लिलि

सिंगल एवं डबल।

प्रकाशक

निदेशक

हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान
(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद)
पो0 बॉ न0 6, पालमपुर हि0 प्र0

दूरभाष : 91–1894–30411
Telegram : CONSEARCH

E-mail:
director@csihbt.ren.nic.in
FAX : 91-1894-30433

May 2000

Designed & Printed at :
Azad Offset Printers (P) Ltd.
144, Press Site, Indl. Area-1,
Chandigarh-160 002
Tel. : 0172-651316, 652349, 654411